International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

आस्तिक दर्शनों में मोक्ष की अवधारणा

डॉ सरोज बाला
सहायक प्रवक्ता, संस्कृति विभाग,
भगत फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय,
क्षेत्रीय केन्द्र, खरल, (जींद)

मोक्ष भारतीय दर्शन का केन्द्र बिन्दु है। मोक्ष को भारतीय दर्शन में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। भारतीय दर्शन की यही विशेषता उसे पश्चिमी दर्शन से जुदा करती है। भारतीय दर्शन मूल्यों का दर्शन है। मूल्य को भारतीय दर्शन की शब्दावली में पुरूषार्थ कहते हैं। पुरूषार्थ चार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। अर्थ से तात्पर्य सांसारिक ऐश्वर्य है। काम से तात्पर्य सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति से है। अर्थ इसका साधन है। धर्म से तात्पर्य नैतिक मूल्यों से है। मोक्ष से तात्पर्य आध्यात्मिक मूल्य से है। मोक्ष का साधन नैतिक जीवन है। मोक्ष जीवन मरण के चक्र से और परिणामस्वरूप सभी प्रकार के सांसारिक दुःखों से हमेशा के लिए मुक्ति है।

सांख्यपयोग में मोक्ष :–

सांख्य और योग वास्तव में एक ही विचार धार के दो पहलू हैं। सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक है। सांख्य तत्व मीमांसा की समस्याओं पर विचार करता है और योग हमारे परम लक्ष्य, जिसे सांख्य योग दर्शन में कैवल्य कहा जाता है, को प्राप्त करने का मार्ग दिखलाता है।

सांख्य दर्शन के अनुसार मानव बन्धन का कारण अविद्या या अज्ञान है। पुरूष अपने वास्तविक स्वरूप की वह शुद्ध चैतन्य सत्ता है। उसको भूल जाता है, और स्वयं का प्राकृतिक बातों से गलत तादाम्य स्थापित कर लेता है। यही पुरूष का अज्ञान है और यही उसके बन्धन का कारण है और जब पुरूष यह भेद ज्ञान प्राप्त कर लेता है कि वह नित्य चैतन्य पुरूष है, न प्रकृति और न उसका अन्य कोई विकार तो वह मोक्ष या कैवल्य प्राप्त कर लेता है।[1]

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

योग सांख्य दर्शन के सैद्धान्तिक पक्ष के स्वीकार करता है, परन्तु इस बात पर जोर देता है कि साख्य द्वारा प्रतिपादित कैवल्य अष्टांग योग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। योग के आठ भाग हैं यमनियमासनप्राणयामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधि इति अष्ट अंगानि।

न्याय विशेषिक में मोक्ष :–

न्याय और वैशेषिक दोनों वस्तु वादी दर्शन है। वस्तुवादी विचारधारा की ज्ञान मीमांसा न्याय दर्शन प्रदान करता है और तत्त्वमीमांसा वैशेषिक दर्शन द्वारा प्रस्तुत की जाती है। वैशेषिक और न्याय के अनुसार पदार्थ ज्ञान से सभी प्रकार के दुःखों का हमेशा के लिए नाश हो जाना ही मोक्ष का अपवर्ग कहलाता है।[2]

उत्तरमीमांसा में मोक्ष :–

शंकराचार्य अपने मोक्ष संबंधी सिद्धान्त का प्रतिपाद ब्रह्मसुत्र के प्रथम अध्याय के प्रथम पाद के चतुर्थ सूत्र पर भाष्य करते समय करते है। मोक्ष के स्वरूप को बतलाते हुए वे लिखते है कि यह परमार्थ है, कूटस्थ नित्य है, आकाश के समान सर्वव्यापी है, सभी विचारों से शुन्य है, नित्य तृप्त है, अव्यवों से रहित है। स्वभाव से स्वयं प्रकाश है। वह एक ऐसी स्थिति है, जहां एक पाप और पुण्य अपने फल सहित त्रिकाल में भी नहीं पहुंच सकते।

मीमांसा में स्वर्ग एवं मोक्ष :–

प्राचीन मीमांसको के मत में स्वर्ग (अर्थात् नित्य निरतिशय आनन्द की प्राप्ति) ही जीवन का चरम लक्ष्य माना गया है। इसलिए कहा गया है कि 'स्वर्गकामेा यजेत्', अर्थात् जो स्वर्ग चाहता है वह यज्ञ करे। सभी क्रमों का अन्तिम उद्देश्य है स्वर्ग प्राप्ति परन्तु धीरे–धीरे मीमांसक गण भी अन्यान्य भारतीय दर्शनकारों की तरह मोक्ष के सबसे बड़ा कल्याण मानने लगे। प्रभाकर सम्प्रदाय का मोक्ष सिद्धान्त धर्म और अधर्म का पूर्ण तथा अदृश्य होना ही आत्मा का मोक्ष है और वहां कुछ भी शेष नहीं रहता जो कि आत्मा का पूनः शरीर में उत्पन्न होने का कारण हो।[3]

हमारे बंधन और सशरीरी होनें का कारण यह है हमें हमारे पाप और पुण्य कर्मों के फलों को भोगना पड़ता है। परन्तु जब पाप और पुण्य दोनों ही अदृश्य हो जाते हैं तो आत्मा को शरीर धारण करने का कोई कारण नहीं रह जाता और आत्मा के शरीर से सभी समाप्त हो जाते हैं तो उसके सभी दुख समाप्त हो जाते हैं और वह मुक्त हो जाती है।[4] एक व्यक्ति यह पता लगाकर कि इस संसार में सुख–दुख के साथ मिश्रित है, मोक्ष की ओर अपने ध्यान को मोड़ता है वह निषिद्ध कर्मों से बचने का प्रयत्न करता है और विहित कर्मों से बचता है जो इस लोक या परलोक में सुख दे सकते हैं। धर्म और अधर्म अर्थात् पुण्य ओर पाप के सभी फलों को भोगकर समाप्त कर देता है और आत्मा का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। फिर आत्मा के शरीर से सभी संबंध विच्छेद होकर आत्मा मुक्त हो जाती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मुमुक्षु को निषिद्ध और काम्य कर्मों का परित्याग कर देना चाहिए, परन्तु उसे नित्य नैमित्तिक कर्मों को तो करते ही रहना चाहिए। क्योंकि उसके न करने से वह पाप का भागी बनेगा और उसके फलों को भोगने के लिए उसे शरीर धारण करना पड़ेगा। मुमुक्षु को कर्मों को फल की आशा से नहीं अपितु केवल कर्मों के लिए करना चाहिए। प्रभाकर नियोग सिद्धि अर्थात् कर्मों को केवल फलों के लिए ही करने के आदर्श को प्राप्त करने पर अधिक बल देते है। बिना किसी बाहरी फल की कामना किए कर्त्तव्यबुद्धि से नित्य कर्मों का अनुष्ठान ही मोक्ष है। अतः मुक्ति अनवरत कार्य ही दशा है, जिसमें क्रिया को छोड़कर अन्य फल की आकांक्षा रहती ही नही।

सन्दर्भ–सूची :–

1. सा0 का0 64, पृ0 58 : एवं तत्त्वाभ्यासान्नास्मि न में नाहमित्यपरिशेषम अविपर्ययाद्विशुद्ध केवलमुत्पद्यते ज्ञानम्।।
2. न्या0 सू0 1/1/22 : तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्गः।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

3. An entire disappearance of all Dharma and Adharma leads to the liberation of the soul and there remains nothing that could lead the soul to b born again in to and body
4. Purva Mimansa inits sources P. 31